

कालिदास के कुमारसंभव महाकाव्य में वैराग्य की अवधारणा

*डॉ. महेश जी. पटेल,

सहायक प्रोफेसर,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर

प्रवीणकुमार कलूभाई बारिया,

+पीएच. डी शोधछात्र,
स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग,
सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभ विद्यानगर

सारांश

संस्कृत साहित्य किसी न किसी रूप में मानव जीवन का अभिन्न अंग रहा है। वैदिक काल से ही मनुष्य अस्तित्व के आधार और अपने कल्याण के समाधान की तलाश में रहा है। वह उसके लिए सदैव तत्पर रहता है। इस दृष्टि से साहित्य मानव जीवन में मील का पत्थर बनता है और मार्ग दिखाता है। साहित्य दो प्रकार का होता है; वैदिक साहित्य और लौकिक साहित्य। वेदों से लेकर दर्शन तक का साहित्य वैदिक साहित्य माना जाता है। कवि की रचनाएँ धर्मनिरपेक्ष साहित्य मानी जाती हैं। वैदिक साहित्य में विभिन्न यज्ञों का उल्लेख मिलता है। इससे संकेत मिलता है कि यज्ञ, जप, तप आदि के माध्यम से मनुष्य जीवन में परम तत्व तक पहुँच सकता है और परोपकारी होने का भाव प्राप्त कर सकता है। इसके लिए सबसे पहले आध्यात्मिकता का विकास आवश्यक है। शम, दम, उपरति, तितिक्षा, समान, श्रद्धा को भली-भाँति जानने वाला व्यक्ति ब्रह्मज्ञ बन सकता है। उपनिषदों में भी संसार के सुखों का त्याग कर परमात्मा को प्राप्त करने के उदाहरण मिलते हैं। संसार में रहते हुए भौतिक सुखों के साधनों से वैराग्य का विकास करना ही सच्चा वैराग्य कहलाता है। इसके अलावा, भारतीय दर्शन ने मानव जीवन का मार्ग भी दिखाया है; ज्ञान, साधना, भक्ति, वैराग्य, कर्म आदि विषयों का भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से वर्णन करके परब्रह्म प्राप्ति हेतु एक विशिष्ट सत्ता की बात की गई है, जिसमें मोक्ष प्राप्ति हेतु सत्ता के लक्षण दर्शाए गए हैं, जिससे मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। इसमें कहा गया है कि; जब तक व्यक्ति विषयों से वैराग्य नहीं करता, तब तक उसे वैराग्य प्राप्त नहीं हो सकता और जब तक वह वैराग्य प्राप्त नहीं करता, तब तक उसे संसार के मोह-माया से बंधा रहना पड़ता है। परिणामस्वरूप, मोक्ष प्राप्त नहीं हो पाता। ऐसे समय में, वस्तुओं से आसक्ति हटाने की अवधारणा को समझना आवश्यक हो जाता है। वैरागी बनने और कर्म करने के लिए आवश्यक बातों का अध्ययन करके वैरागी को अपनाना चाहिए। वैरागी दो प्रकार के होते हैं, पर वैरागी और अपार वैरागी। इसलिए समाज में रहकर और दूसरों के हित के लिए

10.48047/jocaaa.2021.29.06.44

कार्य करके परम सुख प्राप्त करना चाहिए। आज का मनुष्य उस आनंद को प्राप्त करने के लिए सक्रिय हो गया है। कवियों ने भी अपनी रचनाओं में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष जैसे गुणों की प्राप्ति दर्शाकर समाज को उस परम आनंद का अनुभव कराया है तथा प्रत्येक मानव को सद्गुण प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया है।

कीवर्ड: अधिकारी, अध्ययन, दर्शन, वैराग्य, त्याग, आत्मा-परमात्मा, विषय, इन्द्रियाँ, मोक्ष, प्रयत्न, मोह, वासना, मन, मानसिक प्रवृत्ति, कल्याण, भोग ।

शोध के उद्देश्य

- महान संस्कृत कवि कालिदास के महाकाव्य में वैराग्य के तत्व का विश्लेषण करना ।
- महाकाव्य कुमारसंभव में भगवान शिव के चरित्र में निहित वैराग्य के तत्व को प्रकट करना ।
- सांसारिक वैराग्य और परम वैराग्य की तुलना करना ।
- भौतिक सुख और पारलौकिक सुख के बीच परम वैराग्य की तुलना ।

कालिदास के कुमारसंभव महाकाव्य में वैराग्य की अवधारणा

संस्कृत साहित्य में कुलगुरु कालिदास को सर्वोच्च कोटि का कवि माना जाता है। उनका महाकाव्य "कुमारसंभवनाम" कुल 17 श्लोकों में विभाजित है। चूँकि तारकासुर का वध ही इसका मुख्य उद्देश्य है, इसलिए कवि ने इसे सार्थक बनाने के लिए विभिन्न स्थितियों का सृजन किया है। यह घटनाओं के क्रम को एक के बाद एक इस तरह से चित्रित करता है कि सही उद्देश्य की प्राप्ति हो सके। यह हमें खुशी के शिखर तक ले जाने का काम करता है। इस महाकाव्य में शिव के चरित्र में जिस वैराग्य का चित्रण किया गया है, वह क्या है ? इसे कैसे विकसित किया जा सकता है? ऐसे वैराग्य के लिए क्या आवश्यक है ? यह ज्ञान आज के मनुष्य के लिए अत्यंत आवश्यक हो जाता है। ऐसे वैराग्य को समझना आवश्यक है । सबसे पहले व्यक्ति को अपनी प्रवृत्तियों पर नियंत्रण रखना होगा। ये प्रवृत्तियाँ पाँच हैं: विमुख, मूढ़, विरक्त, एकाग्र और विरक्त; ये पाँच प्रकार की प्रवृत्तियाँ ही व्यक्ति को विभिन्न विषयों में लिप्त बनाती हैं। इसलिए, मनुष्य के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि वह अपनी इंद्रियों को भौतिक वस्तुओं की ओर जाने से रोके। लेकिन इन प्रवृत्तियों को अन्य वस्तुओं की ओर जाने से रोकने के लिए महत्वपूर्ण कदम वैराग्य है। और इसी वैराग्य के माध्यम से ही मानसिक प्रवृत्तियों को रोका जा सकता है। इसीलिए योगसूत्र के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि भी कहते हैं कि "योगः चित्तवृत्ति निरोधः" । योग के माध्यम से ही मानसिक प्रवृत्तियों को वश में किया जा सकता है। इन मानसिक प्रवृत्तियों के पूर्णतः निरोध हो जाने पर, योगसिद्ध आत्मा अपने शुद्ध चेतन स्वरूप का साक्षात्कार कर सकती है। इसके अलावा, आत्मा के उत्थान और परम पुरुष के साथ उसकी एकता के लिए मानसिक वृत्तियों का निरोध आवश्यक है। वैराग्य का उद्देश्य

10.48047/jocaaa.2021.29.06.44

संसार के भौतिक पदार्थों से विरक्तता रखना और परम ब्रह्म को प्राप्त करना है। अर्थात्, इंद्रियों के सभी विषयों - रूप, रस, गंध, स्पर्श और शब्द - को भोगने की इच्छा न रखना। क्योंकि भौतिक सुख क्षणभंगुर और क्षणभंगुर होते हैं। जिसके कारण मनुष्य इस संसार के सुखों को भोगने में व्यस्त रहते हुए आत्मा-परमात्मा के दर्शन नहीं कर पाता। ऐसे ईश्वर के दर्शन या बोध से ही जन्म-मरण के चक्र से मुक्ति मिल सकती है। अतः इस जन्म में रहते हुए लोक-कल्याण एवं आत्मा के कल्याण हेतु कर्म करने हेतु कुछ नियमों का पालन एवं क्रियान्वयन अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए वैराग्य के चार चरणों को समझना आवश्यक हो जाता है।

- यतमान संज्ञा
- व्यतिरेक संज्ञा
- एकेंद्रीय संज्ञा
- वशीकार संज्ञा

यतमान संज्ञा

संसार की सभी वस्तुओं को प्राप्त करने और उनकी रक्षा करने के लिए संघर्ष करना पड़ता है। कभी-कभी इन वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए हिंसा भी होती है। हालाँकि, जो वस्तुएँ अर्जित की जाती हैं वे अंततः नष्ट हो जाती हैं और इस प्रकार विरक्तिर्दोषदर्शनात्। अर्थ - दोष दृष्टि से विषय का अनुभव न करना ही यत्तामनसंग्य वैराग्य कहलाता है।

व्यतिरेक संज्ञा

एक मनुष्य या साधक की यह इच्छा हो सकती है कि उसने इतनी सारी इंद्रियों पर विजय प्राप्त कर ली है, लेकिन अभी भी कुछ इंद्रियाँ ऐसी हैं जिन पर विजय पाना बाकी है। अतः, जीती हुई और अजेय इंद्रियों का भेद करना ही वैराग्य कहलाता है, जिसे व्यतिरेक संगना कहते हैं।

एकेंद्रीय संज्ञा

एकेन्द्रिय का अर्थ है 'मन'। इसका अर्थ है उससे राग, द्वेष और मोह को दूर करना। अर्थात्, बाह्य इंद्रियों के विषयों में राग, द्वेष और मोह न रहते हुए भी, वे एक इंद्रिय, मन, में भरे रहते हैं। अतः उसे मन से निकालने के प्रयास को एकचित्त वैराग्य कहते हैं। मनुस्मृतिकार ने भी कहा है कि जो किसी वस्तु को सुनने, छूने, देखने, खाने या सूँघने पर भी हर्ष या शोक का अनुभव नहीं करता, उसे एकचित्त वैराग्य समझना चाहिए।

ऊपर वर्णित वैराग्य के तीन चरणों में से चौथा चरण वैराग्य की साधना में बहुत महत्वपूर्ण है।

वशीकार संज्ञा

10.48047/jocaaa.2021.29.06.44

"वशीकार" शब्द की विशेषता बताते हुए योग सूत्र के लेखक कहते हैं कि दृष्टानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम् । अर्थात् दृश्य और अदृश्य, दिव्य और अलौकिक, साधारण और परम पर अपना प्रभुत्व रखना, अर्थात् किसी भी प्रकार से विषयों के अधीन न होना। "प्रजाएँ मेरे अधीन हैं, "मैं विषयों के अधीन नहीं हूँ" ऐसा तटस्थ विश्वास रखना ही वशीकार संज्ञा वैराग्य कहलाता है। और यही वैराग्य प्रवृत्तियों को रोकने के लिए अत्यंत उपयोगी है । केवल वे ही लोग जो संसार की सांसारिक वस्तुओं से, या वेदों तथा अन्य शास्त्रों में वर्णित श्रेष्ठतम वस्तुओं से आकर्षित नहीं होते, उन्हें ही वशीकरण विद्या नामक वैराग्य प्राप्त हुआ कहा जा सकता है। और ऐसे विरक्त साधक या मनुष्य को अपने मन में यह विचार करना चाहिए कि ये वस्तुएं मेरे आधार पर ही कार्य करती हैं, मैं इन्हें अपने अधीन नहीं करता। इस प्रकार, ऐसा व्यक्ति, जो योग मार्ग पर चला गया है, अपनी सभी इन्द्रियों पर पूर्ण नियंत्रण प्राप्त कर लेता है और उन विषयों को भोगने की पूर्ण संभावना होने पर भी, उसे भोगने की इच्छा भी नहीं होती, तथा उसके मन में किंचितमात्र भी व्याकुलता अनुभव नहीं होती। यही वशीकरण का लक्षण है। संस्कृत साहित्य में इस प्रकार की वैराग्य भावना कालिदास के महाकाव्य 'कुमारसंभव' में भगवान शिव के चरित्र में दिखाई देती है।

मनोनवद्वारनिषिध्वृति हृदि व्यवस्थाप्य समाधिवश्यम् ।

यमक्षरं क्षेत्रविदो विदुस्तमात्मानमात्मन्यवलोक्यन्तं ॥ कुमा.३.५०

अर्थ - शरीर के नौ द्वारों की वृत्तियों को रोककर, समाधि द्वारा मन को वश में करके और हृदय में स्थापित करके, उसी शिव को देखा जो स्वयं सनातन शिव तत्त्व का अनुभव कर रहा था। जिसे देखने की ब्रह्मज्ञानी इच्छा रखते हैं । इसका तात्पर्य यह है कि जब भगवान शिव तपस्या में लीन थे, तो उन्होंने शरीर के नौ द्वारों: आंख, कान, नाक, जीभ, त्वचा, मन, बुद्धि, हृदय और आत्मा के माध्यम से होने वाली गतिविधियों को रोक दिया था। इसके अलावा समाधि के दौरान मन को हृदय में स्थापित करके, अर्थात् अक्षर तत्त्व का बोध करके, मनुष्य केवल परमात्मा में ही लीन हो जाता है, और कोई व्यवधान उत्पन्न नहीं हो सकता। ऐसे शिव को देखकर कामदेव सोचते हैं कि कैसे अपने अभीष्ट कार्य को पूर्ण किया जाए। शिव द्वारा विकसित वैराग्य की अवस्था को वशीकरणसंज्ञा कहते हैं। जो शिव के चरित्र में दिखाई देता है। भगवान शिव स्वयं सभी इंद्रियों को नियंत्रित करके समाधि की स्थिति में पहुंच जाते हैं और जब वे ब्रह्म में विलीन होकर स्वयं को प्रकाशित कर रहे होते हैं, तो उनकी इंद्रियां बहुत अधिक वश में हो जाती हैं। कहा जाता है कि सृष्टि की बाह्य वस्तुओं से कोई प्रभावित नहीं हो सकता, क्योंकि शिव, जो स्वयं परमात्मा हैं, उन्हें किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं है। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड उन्हीं के अधीन है, वे समस्त लीलाओं के रचयिता हैं और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अंततः उन्हीं में विलीन हो जाता है। ऐसे शिव विषयासक्त नहीं हो सकते, इसीलिए उन्हें जितेंद्रिय कहा जाता है। साथ ही, इन भौतिक वस्तुओं की ओर जाने वाली इंद्रियों को रोककर, चूंकि वे स्वयं विषयों के विषय हैं, वे उन विषयों को इंद्रियों की ओर आकर्षित नहीं कर सकते और इसीलिए यह कहा जा सकता है कि भगवान शिव विषयों के अधीन नहीं हैं; यदि उनके

10.48047/jocaaa.2021.29.06.44

अधीन वस्तुएं उत्तेजित या अशांत हो जाएं, तो उनका अस्तित्व पूरी तरह नष्ट हो जाता है। यहाँ आशय यह है कि, जो लोग संसार में रहते हैं और मोक्ष या स्वर्ग की इच्छा रखते हैं, अर्थात् आधुनिक मानव, उन्हें अपने कर्म से विचलित नहीं होना चाहिए। कार्य पूर्ण होते ही संसार के सभी सुखों से वैराग्य स्वतः ही आ जाएगा। विषयों से वैराग्य आ जाएगा। जो लोग विषयों में ही लिप्त रहते हैं, वे सर्वनाश को आमंत्रित करते हैं। एक बार भगवान शिव योगाभ्यास कर रहे थे। उस समय कामदेव ने भगवान शंकर को जीतने का प्रयास किया और जैसे ही समाधि अवस्था में बैठे शिव को इसका अहसास हुआ तो उन्होंने देखा कि उन्होंने अपनी इंद्रियों पर नियंत्रण पा लिया है, फिर भी उनकी इंद्रियां बेचैन होने लगीं और इसका कारण बताया जाता है;

अथेन्द्रियक्षोभमयुग्मनेत्रः पुनर्व शित्वाद्बलवन्निगृह्य ।
हेतुं स्व चेतो विकृतेर्दिद्रक्षुर्दिशामुपान्तेषु ससर्ज द्रष्टिम् ॥ कुमा.३.६९

अर्थ - समाधि के दौरान, अपनी विजयी इंद्रियों के कारण, तीन नेत्रों वाले भगवान शिव ने अपनी इंद्रियों की चंचलता को बलपूर्वक दबा दिया और उनके मन में अचानक उत्पन्न हुई ऐसी अशांति का कारण जानने के लिए अपनी दृष्टि चारों ओर फैला दी। यहाँ यह कहा जा सकता है कि ध्यान में जब सभी इन्द्रियाँ वश में होती हैं, उस समय किंचित मात्र भी आघात नहीं होता। विक्षोभ का आना ध्यान को भंग कर देता है। विक्षोभ उत्पन्न करने वाले ही विक्षोभ उत्पन्न करते हैं, इसीलिए सांख्यकारिका में प्रकृति को विक्षोभ का कारण माना गया है। विघ्नों के माध्यम से ही मनुष्य सुख और मोक्ष प्राप्त करता है। यहाँ विघ्नों के संबंध में यह कहा जा सकता है कि यदि विघ्न उत्पन्न ही न हों, तो सुख की बात ही कहाँ? यदि विघ्न हों, तो ध्यान की निरन्तरता बनी नहीं रहती। अतः योग द्वारा अपनी इंद्रियों को वश में करके, समाधि अवस्था में साधक बाह्य विषयों की ओर आकर्षित नहीं हो सकता। इस प्रकार वश में की गई इंद्रियों के कारण साधक को संसार के भौतिक पदार्थों की किंचितमात्र भी इच्छा नहीं होती। ऐसी वैराग्य भावना रखने वाले को जितेंद्रिय कहते हैं। भगवान शिव के उदाहरण से यह समझा जा सकता है कि कामदेव पार्वती जैसे विषय के प्रति आकर्षण उत्पन्न करने का साधन हैं। ऐसी स्थिति उत्पन्न करने पर भी यह चित्र उभरता है कि भगवान शिव की इन्द्रियाँ उस विषय में सक्रिय नहीं होतीं। इसके अतिरिक्त, यदि वश में की गई इन्द्रियों में विकार उत्पन्न हो जाए, तो उन्हें पुनः वश में कैसे लाया जा सकता है ? उसके बाद अपने काम में लग जाना आज के मनुष्य को एक संदेश देता है। लेकिन जो मनुष्य भौतिक सुखों के पीछे भागता है, वह अपने इच्छित कार्य करने के बजाय, जब विद्वान उसके काम पर आते हैं, तो वह उसे छोड़कर अन्य विषयों में लीन हो जाता है। जिसके कारण वह इच्छित लक्ष्य तक नहीं पहुँच पाता। ऐसा न करने पर उसके पूर्ण विनाश की संभावना बनी रहती है। अतः, बिना किसी बाधा के इच्छित लक्ष्य को पूर्णतः पूरा करना ही मनुष्य की विशेषता है। साधक वश में की गई इंद्रियों के ज्ञान के माध्यम से कार्य में आने वाली किसी भी रुकावट या झुंझलाहट का कारण जान सकता है, जो भगवान शिव के चरित्र में दिखाई देता है।

स दक्षिणापाङ्गनिविष्टमुष्टिं नतां समाकुत्तित सव्य पादम् ।

ददर्श चक्रिकृतचारुचापं प्रहर्तुमभ्युधयतमात्मायोनिम् ॥ कुमा.३.७०

अर्थ - उसने देखा कि कामदेव ने अपने कंधे को थोड़ा झुकाया और अपनी मुट्ठी को अपनी दाहिनी आंख के कोने तक निशाना बनाया और उसका बायां पैर घुटने से मुड़ा हुआ था और वह उस पर तीर चलाने के लिए तैयार था । योग के माध्यम से, समाधि अवस्था में, साधक सभी इंद्रियों पर विजय प्राप्त कर लेता है और स्वयं को प्रकाशित कर लेता है, परमात्मा के साथ एकाकार हो जाता है। यदि उस समय इंद्रियों में कभी-कभी असुविधा होती है, तो उसका क्या कारण है ? अथवा वह क्या है जो वश में की हुई इंद्रियों को विषय की ओर आकर्षित करता है ? इसे इंद्रियों पर विजय पाने वाले शिव के चरित्र के माध्यम से समझा जा सकता है और यह स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है कि किस प्रकार इंद्रियों पर विजय पाने वाले शिव कामदेव की वृत्ति को देखकर वशीभूत इंद्रियों को विषय की ओर खींचने का प्रयास करते हैं । जब साधक को अपने कार्य में विद्वान जैसा कुछ अनुभव हो, तो उसे उसका कारण जानना चाहिए। यहाँ भगवान शिव वैराग्य नामक वैराग्य विद्या से संपन्न हैं, जिसके द्वारा समस्त विषयों की क्रियाशीलता जानी जा सकती है। इसके अलावा, कामदेव जैसी वृत्ति का मुख्य उद्देश्य इन सभी इंद्रियों को नियंत्रित करने वाले शिव की समाधि को भंग करके उन्हें किसी अन्य विषय (पार्वती) की ओर आकर्षित करना है। लेकिन इंद्रियों पर विजय पाने वाले शिव उस वृत्ति का प्रतिरोध करते हैं।

तपः परामर्शविवृद्धमन्योर्भुभङ्गदुष्पेक्ष्यमुखस्य तस्य ।

स्फुरन्नुदरिचिः सहसा तृतीयादक्षः कृशानुः किलनिष्पपातः ॥ कुमा.३.७१.

अर्थ - भगवान शिव अपनी तपस्या में विघ्न पड़ने के कारण अत्यंत क्रोधित हो गए, उनकी भौहें ऊंची हो गईं और उस समय अपना मुख देखना कठिन हो गया और जब उनकी तीसरी आंख खुली तो अग्नि की ज्वाला फैलकर चिंगारी की तरह निकली और कामदेव को जलाकर भस्म कर दिया ।

यहाँ जब वश में की हुई इंद्रियों को ध्यान आकर्षित करने के लिए बार-बार छेड़ा जाता है, तो इंद्रियों की 'ज्ञान' अग्नि प्रकट होकर विषय की ओर निर्देशित वृत्तियों को जलाकर राख कर देती है। साधक को चाहिए कि वह समाधि अवस्था में तथा दैनिक जीवन में भी विषयों की ओर अपनी प्रवृत्ति को न जाने दे, बल्कि उसे जड़ से उखाड़ फेंके। ऐसा करने से ही उसे अभीष्ट फल (मुक्ति) या परमानंद की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार, ईश्वरीय शक्ति के प्रवर्तक होने के कारण भगवान शिव को ऐसी विरक्ति की आवश्यकता महसूस नहीं होती, अपितु उन्होंने मानव जीवन के लिए एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया है। मनुष्य को जीवन में वस्तुओं के सुख को समझना चाहिए, उनके अस्तित्व को पहचानना चाहिए और आनंदमय जीवन जीने के लिए निरंतर प्रयास करना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले मन से संसार की सभी वस्तुओं के प्रति आसक्ति को हटाकर आनंद प्राप्ति की दिशा में प्रयास करना चाहिए । जब तक भौतिक वस्तुओं के प्रति लोभ, उनका भोग,

10.48047/jocaaa.2021.29.06.44

संरक्षण, तथा उन्हें अस्थायी होने पर भी प्राप्त करने की इच्छा को जड़ से नहीं उखाड़ा जाता, तब तक आज के मानव का पतन होता रहेगा। बहुत अधिक धन होने पर चोरी होने का भय रहता है, तथा पर्याप्त धन न होने पर चोरी करने की इच्छा रहती है। जिससे उसके आचरण, व्यवहार और रिश्तों में दरार पैदा हो जाती है। आधुनिक युग में धन की लालसा के कारण रक्तपात, अत्याचार और भ्रष्टाचार बढ़ रहा है, ऐसे में यदि व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद और ईर्ष्या से मुक्त होकर जीवन जीने लगे तो वह आने वाले युगों में प्रेरणास्रोत बन जाएगा। उसका जीवन धन्य हो जाता है। इसके लिए यदि मन और मन की वृत्तियों को नियंत्रण में रखा जाए, तो संसार को केवल वर्तमान में समझने वाला व्यक्ति अपनी दैनिक समस्याओं से बाहर आ सकता है।

संदर्भग्रंथ सूची

- १ पातंजल योगसूत्र, स्व.नर्मदाशंकर बालाशंकर पंड्या, सस्तुं साहित्य वर्धक कार्यालय अमदावाड, आवृत्ति-१३, सं.२०७५
- २ भारतीय दर्शनो अने प्रस्थानत्रयी, ज्योतेन्द्र देसाई, पार्थ पब्लिकेशन अमदावाड. बीज आवृत्ति-२०२१, पृष्ठ-८१.
- ३ योगदर्शन, पं. मयाशंकर शर्मा दर्शानाथार्य, गंगा मुद्रणालय वल्लभ विद्यानगर, प्रथमावृत्ति - १९५४.
- ४ योगदर्शन, तदेव.
- ५ मनुस्मृति, शास्त्री गिरीशशंकर मयाशंकर, सस्तुं साहित्य वर्धक कार्यालय अमदावाड, आवृत्ति-१०, सं.-२०५८.
- ५ पातञ्जलयोगदर्शन, हरिकृष्णदास गोयन्दका, गीताप्रेस गोरखपुर. चौवनवा पुनर्मुद्रण- सं.२०७७.
- ७ कुमारसंभवमं महाकाव्यम्, डॉ. सुधाकर मालवियः, चौखम्बा कृष्णदास अकादमी, वाराणसी, संस्करण : पुनर्मुद्रित, वि. सं. २०७०, पृष्ठ-८५.
- ८ कुमारसंभव, रूपान्तरकार विराज, राजपाल & सन्स, संस्करण-२००८, पृष्ठ-३५.
- ९ कुमारसंभवमं महाकाव्यम्, तदैव- पृष्ठ-९२.
- १० कुमारसंभवमं महाकाव्यम्, तदैव- पृष्ठ-९३.
- ११ कुमारसंभवम्, श्रीअविनाशचन्द्रमुखोपाध्याय, पृष्ठ-९५.

* आसिस्टन्ट प्रोफेसर, अनुस्नातक संस्कृत विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभविद्यानगर, आणंद, गुजरात।
maheshgpatel78@gmail.com

+ शोधार्थी, अनुस्नातक संस्कृत विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय, वल्लभविद्यानगर, आणंद, गुजरात।
baryapraavin07@gmail.com